सर्वमंगला

(महाकाव्य)

महोपाध्याय माणकचन्द रामपुरिया

कलासन प्रकाशन
कल्याणी भवन बीकानेर (राज)

ISBN 81-86842-42 X

महोपाध्याय माणक चन्द रामपुरिया

संस्करण — प्रथम 1999

प्रकाशन — कलासन प्रकाशन
मॉडर्न मार्केट बीकानेर (राज)

लेजर प्रिंट — श्री करणी कम्प्यूटर एण्ड प्रिन्टर्स
गंगाशहर बीकानेर (राज)

मुद्रक — कल्याणी प्रिन्टर्स
माल गोदाम रोड बीकानेर

मूल्य — 130/- रुपये

Sarvmangla
(EPIC) by Mahopadhaya Manakchand Rampuria
Page 144 — Price 130/

समर्पण –

—

''सर्वमगला'' माता करणी-
तेरी कृपा दु ख में तरणी।
पुण्य-ध्वजा फहराने वाली-
कीर्त्ति तुम्हारी शोभाशाली।
काव्य समर्पित करता हूँ माँ!
श्री चरणों में धरता हूँ माँ!!

महोपाध्याय माणकचन्द रामपुरिया

महोपाध्याय श्री माणकचन्द रामपुरिया
संक्षिप्त परिचय

महोपाध्याय श्री माणकचन्द रामपुरिया की साहित्य साधना विरल और अनुपम है। वे शब्द संसार के अखण्ड साधक हैं। रचना उनका धर्म है मानवीय मूल्य उनके लिए दीप्तियां हैं और भारतीय संस्कृति उनके लिए प्रेरणा की अजस्र धारा है। उन्होंने काव्य की सभी धाराओं में रचना की- खण्ड काव्य स्फुट काव्य और प्रबन्ध काव्य पर उनकी विशेष पहचान महाकाव्यों के महाकवि के रूप में रही है। 1955 से अपनी काव्य यात्रा को शुरू करके उन्होंने आज तक 67 काव्य कृतियों का सृजन किया है जिनमें 30 महाकाव्य 33 स्फुट काव्य 3 खण्ड काव्य तथा एक शोध प्रबन्ध सम्मिलित हैं।

शब्द साधना उनके लिए यज्ञ नहीं, एक महायज्ञ है। न तो उनकी कलम विराम लेती है और न उनकी मन की तरंगें। वे 'चरैवेति-चरैवेति' के उपासक हैं। प्रकृति की तरह उनकी कविताए भी प्रयोजनधर्मी ह। प्रयोजन है इसान को और अच्छा इसान कैसे बनाया जाए उसके मन से कलुष को कैसे दूर किया जाए मानव मूल्यों का परिरक्षण कैसे हो और सृष्टिक्रम में मनुष्य की महत्ता को कैसे कायम रखा जाए।

हिन्दी साहित्य के दिग्गज साहित्यकारों और समीक्षकों ने उनकी कविताओं की मुक्त कण्ठ से प्रशसा की है। इनमें आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी पडित शिवपूजन सहाय डॉ रामकुमार वर्मा, डॉ नगेन्द्र प्रोफेसर कल्याणमल लोढा सीताराम चतुर्वेदी गोपालदास नीरज अक्षयचद्र शर्मा कन्हैयालाल सेठिया और शभूदयाल सक्सेना आदि सम्मिलित हैं। उनके काव्य की सराहना करने वाले और भी अनेक लोग हैं पर रामपुरियाजी का मूल लक्ष्य तो साधना है सराहना नहीं। वे युग के काल पटल पर अपने शब्दों को अकित करते चलते हैं उनमें से कुछ शब्द तो कालजयी होंगे ही बस इसी धुन में रचे जा रहे हैं- रचे जा रहे हैं। यह एक अखण्ड अनथक यात्रा है जिसके पाथेय हैं शब्द और जिसका सम्बल है साधना।

पडित शिवपूजन सहाय के अनुसार उनकी कृति (मधुज्वाल) "साहित्य के प्रखर प्रशस्त पथ का दीप स्तम्भ है तो डॉ नगेन्द्र का मानना है कि छदों की नूतन योजनाए प्रस्तुत करने पर भी- मात्राओं लय व गीत के बधन कहीं शिथिल नहीं होते। छदों में सर्वत्र सरल मृदुल गति है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने 1963 में अभिमत व्यक्त किया था कि 'रामपुरियाजी उत्साह परायण युवा कवि हैं। डॉ रामकुमार वर्मा के अनुसार उनकी कविताओं में एक सगीत है जो शब्दों की परिधि पार करके हृदय में गूजता रहता है। प्रोफेसर कल्याणमल लोढ़ा उनमें ' एक सिद्ध कवि की अत शक्ति देखते हैं तो शभुदयाल सक्सेना उनके काव्य में नया स्वर नई राग एव नई आशा को विद्यमान पाते हैं।

रामपुरियाजी ने महाकाव्यों की रचना में एक कीर्तिमान स्थापित किया है- सख्या की दृष्टि से भी और गुणवत्ता की दृष्टि से भी। वे निरतर गतिशील हैं निरतर लिखते जा रहे हैं। बीसवीं शताब्दी के ऐसे वीतराग अजातशत्रु और तपस्वी शब्द साधक पर गर्व है और होना भी चाहिए।

पवनपुरी बीकानेर — भवानीशकर व्यास 'विनोद'

कुछ अपनी ओर से-

सर्वमगला -आपके समक्ष प्रस्तुत है। फिर मैं अपनी ओर से क्या कहूँ। हाँ, एक बात की ओर मैं अवश्य सकेत करना चाहता हूँ कि काव्य और इतिहास के अपने-अपने और अलग-अलग क्षेत्र हैं।

महाकाव्य के माध्यम से जब किसी चरित्र को रेखाकित किया जाता है, तब उसमें उन स्थितियों और परिस्थितियों की भावनाएँ मूल रूप से मुखरित होती हैं जो उनके लिए उत्प्रेरक सिद्ध हुई थी।

इनके विपरीत इतिहास काल और समय की सीमा में अपने को परिबद्ध रखता है।

प्रस्तुत महाकाव्य में करणी माँ के जीवन की सम्पूर्ण लीलाओं को समेटने का दम्भ नहीं किया जा सकता जो सीमा-हीन है अखण्ड-अनन्त महाज्योति का कालातीत रूप है उसे कभी सीमित शब्दों में बाँधा नहीं जा सकता है। हाँ उनके जीवन की कुछ रेखाओं का स्पर्श मात्र किया जा सकता है और मेरे क्षेत्राधिकार में उतना ही आता भी है। इतिहासकारों के अनुसार 1444 विक्रम सम्वत में अश्विन शुक्ल सप्तमी को करणी माँ का जन्म हुआ था। और इनके महानिर्वाण की तिथि 1595 विक्रम सम्वत् चैत्र शुक्ल नवमी मानी गयी है। इस प्रकार एक सौ इक्यावन वर्ष का जीवन जीकर करणी माँ ने मरु-प्रदेश के सम्पूर्ण क्षेत्र पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है। सारा प्रदेश इनके आशीर्वाद से अभिभूत है। जब तक माता करणी स-शरीर इस पृथ्वी पर रहीं सम्पूर्ण राजस्थान के लोग उनकी उपासना करते रहे। उनकी आशीष पाते रहे। आज माँ करणी हमारे बीच 'देही रूप में नहीं है। किन्तु उनके मगल आशीर्वाद का अहसास हम सभी लोगों को प्राय होता रहता है। माँ करणी का यह आशीर्वाद सदा हमें मिलता रहे इसीलिए यह आवश्यक है कि हम माँ की आराधना में अपना हृदय रमाएँ। प्रस्तुत महाकाव्य का प्रणयन इसी आराधना का अग है।

अन्त में अपने सहृदय प्रेमियों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ, जिन्होंने मुझे करणी माता पर कुछ लिखने की प्रेरणा दी।

इस महाकाव्य को पढ़कर यदि पाठक-वृन्द में थोड़ी बहुत भी भगवत-सत्ता की अनुकम्पा का रोमाच प्रकटित हुआ तो इसे मैं अनन्त-ज्योति-स्वरूपा सर्वमगला मातेश्वरी करणी माँ का ही आशीर्वाद समझूँगा।

तथास्तु।

माणकचन्द रामपुरिया

प्रथम पुष्प

जय माँ करणी शक्ति-दायिनी।
जीवन-शाश्वत-भक्ति-दायिनी।।
मोह-तृषा में पड़ा मनुज है,
बना पाप से घोर दनुज है।

घृणित कर्म का दास बना है,
अघ-कीचड़ में गड़ा सना है।
इसका अब उद्धार करो माँ,
सत्य-ज्योति साकार करो माँ।

स्वार्थ-ग्रस्त भय-त्रस्त हुआ-सा
द्वेष-घृणा का सर्प हुआ-सा,
मरण-तुल्य है जीवन जग का,
बाधित पग-पग है भव मग का,

जग में जाग्रत-ज्योति जगाओ,
मानव को नव पथ दिखाओ।
दिशा-दिशा में घिरा अँधेरा-
अनाचार का कुत्सित घेरा

इसे हटाओ दूर भगाओ
जगमग-जीवन-ज्योति जगाओ।
सूख रहा है उपवन सारा
नयन-नयन में सागर खारा,

किंकर्त्तव्य-विमूढ़ सभी जन,
करते पल-पल भीषण-क्रन्दन,
दृग से आँसू-धार प्रवाहित-
होती पल-छिन व्यथा-समाहित,

तुम ही माँ उद्धार करोगी-
गहन तिमिर में ज्योति भरोगी।
तुम पर ही है सारी आशा-
शीघ्र मिटाओ गहन कुहासा।

तड़प रहा जग शान्ति चाहिए-
प्राण-प्राण में कान्ति चाहिए,
मृगतृष्णा में जग है विह्वल,
सिसक रहा है प्रतिक्षण प्रतिपल,

जागो अब उद्धार करो माँ
नव जीवन सचार करो माँ।
शीश नवाता हूँ मैं सम्मुख
तुम्हीं हरोगी भव का सब दुख,

जय-जय करणी माते अम्बे।
सृष्टि-धारिणी माँ जगदम्बे।।

✦ ✦ ✦

सृष्टि अहर्निश चलती इसमें-
सदा विषमता आती है,
दैव प्रेरणा से ही भू पर-
पुण्य राह वन जाती है।

राजस्थान क्षेत्र है जिसमें-
पौरुष सदा अखण्ड रहा,
इसके गौरव की गाथा में-
सब दिन तेज अखण्ड रहा।

जब भी भू पर दुर्दिन आया-
इसने उसे भगाया है,
घोर तिमिर के प्राणों में भी-
ज्योति-केतु फहराया है।

जब भी कोई नयी रुकावट-
पथ में काँटे-सी आई,
पदाघात से मिट्टी बनकर-
बाधाएँ भी मुस्काई।

नर-नारी हैं सभी यहाँ के-
प्राणों में उद्वेग लिए,
जीवन के हर जाग्रत क्षण का-
एक विमल संवेग लिए।

जब भी ऊषा आकर भू पर-
नयी ज्योति फैलाती है,
नयी किरण से कर्म-वली में-
नूतन शक्ति जगाती है।

कण-कण में है ज्योति विमल औ'-
प्राणों में उत्साह भरा,
रहता सब दिन हर प्राणी के-
मन में प्रेम अथाह भरा।

दैवी शक्ति यहाँ की भू पर-
सब दिन सदा बरसती है,
इसके कण-कण से जीवन की-
उर्जा नयी सरसती है।

दिन जब जगता कर्म-भाव में-
लोग-बाग जग जाते हैं,
अपने जीवन-यापन-कर्मों-
में झटपट लग जाते हैं।

रजनी में भी लोग यहाँ पर-
पौरुष सदा जगाते हैं,
बैठ कहीं इस पुण्य-भूमि पर-
भेरू-शख बजाते हैं।

यही क्षेत्र है जहाँ आज भी-
गाथा होती वीरों की
रखते दुश्मन याद, यहाँ जो-
मार पड़ी थी तीरों की।

यही सृष्टि का पुण्य क्षेत्र है-
भरत-भूमि का गौरव है,
इसी क्षेत्र से भारत-भर में-
शक्ति-पीठ का उद्‌भव है।

हिंगलाज है देवि यहाँ की-
उनको प्रथम प्रणाम करें,
उनका ही हम कीर्त्तन-गायन-
मन-से आठों याम करें।

इनका ही अवतार लिए थी-
करणी माता इस भू पर,
आओ, हम सब शीश नवाएँ-
उनके चरणों पर सत्वर।

जय-जय करणी माता तुम ही-
जग को राह दिखाओगी,
गाऊँ जी भर गीत तुम्हीं माँ-
शक्ति रूप बन आओगी।

द्वितीय पुष्प

शक्ति-पीठ है अतुलित पावन-
हिंगलाज माँ देवी हैं,
ब्रह्मा-विष्णु-महेश देव सब-
उनके पद के सेवी हैं।

जब-जब विपदा आई, तब-तब-
जन-जन ने है याद किया,
मैया ने फिर हाथ उठाकर-
सबको आशीर्वाद दिया।

माँ का रूप अलौकिक कोई-
इसको जान नहीं पाता,
मूक भाव से दिखा देता-
अपना शीश नवा जाता।

माँ का है उद्‌घोष कि बेटा-
सत्पथ पर तुम सदा चलो,
जीवन-यात्रा के क्रम में तुम-
सत्य-रूप में सदा ढलो।

छोड़ सत्य को और जगत में-
नहीं दूसरा आश्रय है,
जिसने इसको अपनाया है-
सब से वह जन निर्भय है।

सत्य-रूप परमेश्वर की ही-
जोत जगत में फैली है,
इससे जो विच्छिन्न हुई वह-
चादर जग की मैली है।

यही एक है सत्य कि जिसका-
चाहे जो भी नाम कहो,
जैसे भी हो, भजो इसी को-
इसकी छवि अभिराम कहो।

इसे छोड़ कर इस धरती पर-
कुछ भी दिखता सत्य नहीं,
जीवन-भावन की गाथा में-
इसे छोड़ कुछ तथ्य नहीं।

आर्ष-ग्रन्थ में जो मिलता है-
इसकी ही वह वाणी है,
जहाँ कहीं जो शक्ति दीखती-
इसकी ही अभिमानी है।

इससे ही ले ज्योति प्रकाशित-
रवि-शशि-तारे अम्बर में,
इसके मन की ही गहराई-
अतल-तलातल सागर में।

जहाँ-कहीं जो शक्ति दीखती-
माँ का उसको सबल है,
हर प्राणी की साँस-साँस में-
उसका स्पन्दन पल-पल है।

इतनी कोमल है वह, उससे-
मुकुल-वकुल शरमाते हैं,
अपनी कोमल पखुड़ियों से-
उस पर अर्घ्य चढाते हैं।

रूप अलौकिक ऐसा, उससे-
कामदेव डर जाता है,
अपने पुष्पित बाणों को वह-
चरणों पर धर जाता है।

वह विराट् है ऐसी उससे-
बढ़कर कोई और नहीं,
उससे आगे इस धरती का-
कोई भी सिरमौर नहीं।

भक्तों के हित कोमल जितनी-
रिपु पर उतनी बलशाली,
दलन सदा दैत्यों का करती-
बनकर मइया ही काली।

जहाँ कहीं दुर्जन जो दिखते-
उनका नाश किया करती,
पापों का घट पुण्यों से ही-
मइया सब दिन ही भरती।

छिद्र-कपट औ' दुराचार को-
सदा भगाए रखती है
सात्विकता की जोत अहर्निश-
वही जगाए रखती है।

✦ ✦ ✦

शक्ति-पीठ है यही जहाँ पर-
सति का था ब्रह्म रध्र गिरा,
इसी हेतु इस धरती पर है-
इसका सब सौभाग्य फिरा।

सति की गाथा आगे होगी–
पहले इन्हें प्रणाम करें,
माँ के आगे शीश नवा कर–
अन्तर–तर अभिराम करें।

✦ ✦ ✦

हिंगलाज माँ तेरी जय हो–
जय–जय प्रतिदिन गायेंगे।
तेरी करुणा का सबल पा–
जीवन सुखद बनायेंगे।।

तीसरा पुष्प

कहते सब जन हिंगलाज की-
गाथा सब दिन गायेंगे,
शक्ति-पीठ ऐश्वर्यमयी यह-
सब को सत्य बतायेंगे।

यही क्षेत्र है परम सती का-
अग गिरा था प्रथम जहाँ,
इससे अधिक पवित्र धरा पर-
आज दूसरा क्षेत्र कहाँ ?

कथा प्रसिद्ध कही सतों ने-
उसको ही मैं गाता हूँ,
रामचन्द्र वनवास गए थे-
वह सब पुन सुनाता हूँ।

राम-जानकी और लखन सग-
विचर रहे थे जगल में,
करुणा का सद्भाव खिला था-
माँ धरती के अचल में।

मान पिता का वचन राम जब-
हँसते वन में आए थे,
ऋषि-मुनि के सँग घूम-घूम कर-
करुणा भाव जगाए थे।

वही समय था जब त्रिनेत्र भी-
सती-सग थे घूम रहे,
रामचन्द्र को देख अचानक-
आँखों से प्रेमाश्रु वहे।

जय सिच्चदानद जग पावन-
कह कर शिव ने नमन किया,
हाथ उठा कर रामचन्द्र ने-
स्वस्ति वचन उच्चार दिया।

मानव-वपु में सर्वेश्वर ही-
उतर भुवन में आए हैं,
कोई माया जान न पाए-
इसीलिए भरमाए हैं।

यही सोचकर शकरजी ने-
चुपके उन्हें प्रणाम किया
और वहाँ से आगे बढकर-
मन में प्रभु का नाम लिया।

सोचा- कोई जान न ले ये-
सर्वशक्ति सर्वेश्वर हैं,
सृष्टि-नियता-पालक-हरता-
अजर-अमर अवनिश्वर हैं।

यही सोचकर शकर चुपके-
साथ सती के बढ़ आए,
उनके मन में कभी न कोई-
भाव दूसरे थे छाए।

किन्तु सती के मन में शका-
जागी सहसा एक नयी,
सर्वेश्वर हैं रघुवर तो फिर-
सर्वशक्ति वह कहाँ गयी ?

भटक रहे क्यों दीन मनुज-से-
दण्डक वन में डगर-डगर ?
होकर ये सर्वेश्वर क्योंकर-
मारे फिरते भूतल पर ?

✦ ✦ ✦

जान गए शकर अब सति के-
मन में शका जागी है,
उसके मन की निष्ठा रूपी-
सभी भावना भागी है।

मेरे कृत्यों से भी उसमें-
जागा जब विश्वास नहीं,
जाने क्या यह दैव-योग है-
मिलता कुछ आभास नहीं।

वही दीन औ' मूढ़-मती है-
जिसका मन चचल रहता,
अपने-से ही जिसके मन के-
विश्वासों का गढ़ ढहता।

शकर ने देखा अब सति की-
शका बढती जाती है,
महासिन्धु में उठी भाँवरी-
और अधिक गहराती है।

कहा- भामिनी खुद जा देखो-
सागर की क्या गहराई ?
स्वय परीक्षा ले लो जाकर-
प्रभु में क्या है प्रभुताई ?

मन में शका जाग गयी तब-
यों ही कभी न मिट सकती,
इसे मिटाने वाली कोई-
युक्ति न मुझको है दिखती।

मन में किया विचार कि सति का-
दिखता है कल्याण नहीं,
मेरे कहने पर न जगी तो-
होगा कभी विहान नहीं।

बोले शकर- जाओ भामिनी-
लाओ अन्य विचार नहीं,
आत्म-ज्ञान से बढ़कर जग में-
कहीं अन्य उपचार नहीं।

सती हृदय से आकुल-व्याकुल-
चली अनेकों भाव लिए,
कैसा वह सर्वेश्वर होगा ?
तापस-रूप-स्वभाव लिए।

✦ ✦ ✦

प्रभु की ऐसी माया जिसका-
पाता कोई पार नहीं,
देव-असुर-गन्धर्व-महर्षि-
भटके बारम्बार यहीं।

शक्ति-मती करणी माता ही-
करती हैं उद्धार सदा,
जीवन के कण-कण को मिलती-
उनकी अमृत-धार सदा।

चली परीक्षा लेने शिव की-
शक्ति-भामिनी कल्याणी,
देखें वह सर्वेश्वर कैसा ?
कैसी माया अनजानी ?

✦ ✦ ✦

जय-जय शक्ति-मती माया की-
तुझको शीश नवाता हूँ,
यह अनादि-अव्यक्त सदा है-
पार न इसका पाता हूँ।

चौथा पुष्प

जय माँ अम्बे तेरी लीला-
अद्‌भुत है अनजानी है,
कोई इसको जान न पाता-
चाहे जितना ज्ञानी है।

तेरी माया वही जानता-
जिसको तू बतलाती है
उसके मन में जाने कितनी-
नयी भावना आती है।

कौन समझ सकता है तुझको-
किसमें ऐसी शक्ति भला,
किसमें वैसी दृष्टि कि देखे-
जीवन में अनुरक्ति भला।

देव-दनुज-गन्धर्व सभी में-
तेरी माया रहती है,
सब जीवों की चक्रित आभा-
इससे ही तो चलती है।

इससे कोई अलग नहीं है-
सब हैं इसके बन्धन में,
सभी भटकते इसकी ही-
मुस्कानों में औ' क्रन्दन में।

✦ ✦ ✦

चली परीक्षा लेने को सति-
अखिल सृष्टि-सर्वेश्वर की,
परम अखण्ड ज्योति जो भू पर-
उसके आनन भास्वर की।

यही समय था दशकधर ने-
सीता का था हरण किया,
सृष्टि नियता के हाथों ही-
उसने अपना मरण लिया।

राम-लखन जड़-चेतन सब से-
पता सिया का पूछ रहे,
रामचन्द्र के कमल-नयन से-
अश्रु-विन्दु थे विमल वहे।

सती ह्रदय में शका जागी-
ईश्वर यह तो कभी नहीं,
साधारण जन जो इस भू का-
हो सकता क्या ईश कहीं ?

फिर तो सती ह्रदय से विह्वल-
होकर आगे वढ़ आई,
सीता का धर रूप मोहिनी-
पथ पर आकर मुस्काई।

लखन देखकर चकित हुए पर-
राघवेन्द्र सव जान गए,
सती कपट का वेश-धरे है-
अपने मन में मान गए।

झट आगे बढकर खुद पूछा-
शकरजी की प्रिय सती।
घूम रही क्यों एकाकी तुम-
वन में ऐसे सत्य-व्रती ?

यह जगल है यहाँ अकेले-
तेरा चलना ठीक नहीं,
ऐसा करने से फल होगा-
अतकाल कुछ नीक नहीं।

जाओ देखो शकरजी को-
वहीं ज्ञान सब पाओगी,
शिव के स्नेह-विटप के नीचे-
मन को शान्त बनाओगी।

विलग धर्म से होकर चलने-
वाला पाता राह नहीं,
शका की ज्वाला का मन पर-
लगने दो कुछ दाह नहीं।

✦ ✦ ✦

चली सती जब मूढ विमल मन-
कौतुक प्रभु ने दिखलाया,
जिधर-जिधर थी सती देखती-
प्रभु का रूप वहाँ आया।

आगे-पीछे-ऊपर-नीचे-
रामचन्द्र थे मुस्काते,
जिधर बढाती कदम वहीं पर-
राम-लखन दिखते आते।

एक अजब अनुभूति सती के-
मन में सहसा लहराई,
कण-कण तक में प्रभु की छवि ही-
केवल पड़ती दिखलाई।

कुछ भी ऐसा नहीं कि जिसमें-
रघुवर का हो रूप नहीं,
रामचन्द्र से अलग किसी का-
मिलता नित्य स्वरूप नहीं।

चकित-भ्रमित-सी सती हृदय में-
कुछ भी सोच नहीं पाई,
किसी तरह वह दौड़ी-दौड़ी-
शकर जी तक थी आई।

पूछा शिव ने- सती, हृदय की-
सारी बातें बतलाओ,
क्या देखा ? अनुभव में क्या-क्या-
आया ? मुझ से कह जाओ।

सती हृदय सकोच बहुत था-
कुछ भी बोल नहीं पाई,
कहा कि करके नमन निवेदित-
लौटी तुरत यहाँ आई।

तुमने जो कुछ कहा सत्य है-
शका मन में लेश नहीं,
सच कहती हूँ मेरे मन में-
दुविधा का लवलेश नहीं।

देख लिया सर्वेश्वर को औ -
देखी उनकी महिमा भी,
सृष्टि-नियता-पालक प्रभु की-
गौरवमय सब गरिमा भी।

तुमने जो भी कहा सत्य है-
सभी बात में जान गयी,
जिन्हें सच्चिदानन्द कहा है-
मैं भी वैसा मान गयी।

✦ ✦ ✦

शिव ने ध्यान लगाकर देखा-
सति ने जो था काम किया,
शका से अभिभूत उसी ने-
सीता का था रूप लिया।

सहसा मन में जगज्जननि माता-
का अनुपम भाव जगा,
उनके मन में नव विराग का-
एक अटल अनुभाव जगा।

मन से बोले, सती- साथ अब-
प्रेम प्रिया का छूट गया,
माता रूप धरा तो उससे-
प्रिय का बन्धन टूट गया।

लिया यही व्रत होगा उससे-
इस तन में कुछ राग नहीं,
मातृ-रूप में प्रिया-प्रेय का-
जागेगा अनुराग नहीं।

प्रण कर शकर विटप छाँव में-
ध्यान लगा लवलीन हुए
योग-समाधि लगाकर प्रभु में-
मन से मग्न-प्रवीण हुए।।

पाँचवा पुष्प

जगज्जननि माँ तेरी गाथा-
जग में अपरम्पार सदा,
सिद्ध-तपस्वी-योगी-मुनि भी-
करते जय-जयकार सदा।

सती धरी जो रूप सिया का-
शकर ने था त्याग दिया,
भूतनाथ ने बैठ विटप तर-
एकाकी व्रत ठान लिया।

यही समय था दक्ष प्रजापति-
के आसन आसीन हुए,
यज्ञ ठान कर पुण्य कर्म में-
भाव-सहित तल्लीन हुए।

देव-यक्ष-गन्धर्व सभी को-
शुभ्र निमत्रण भेजा था
अपने और पराए तक को-
मन-से वहाँ सहेजा था।

एक सती ही दक्ष-सुता थी-
जिसको नहीं बुलाया था,
ब्रह्म सभा में शिव से क्रोधित-
होकर उसे भुलाया था।

✦ ✦ ✦

देखा सति ने व्योम-मार्ग से-
आज सभी गण जाते थे
देख-देखकर उसके दृग में-
आँसू भर-भर आते थे।

वोली शकर से- मुझको भी-
    जाने की है चाह वड़ी,
पिता गेह में जाते सव को-
    देख रही हूँ खड़ी-खड़ी।

बोले शकर- विना वुलाए-
    अच्छा होगा क्या जाना ?
उन्हें निमत्रण नहीं भेजना-
    एक वहाना अनजाना।

विना वुलाए जाने पर-
    परिणाम न अच्छा होएगा,
ऐसा कठिन कलक लगेगा-
    कोई जिसे न धोएगा।

✦ ✦ ✦

लाख कहा शकर ने लेकिन-
    सती न तिलभर मान सकी,
होगा इसका अन्त भला क्या ?
    तनिक न वह पहचान सकी।

लेकर सँग कुछ मुख्य गणों को-
    सती वहाँ पर जाती है,
मिलकर अपनी माँ-वहनों से-
    सती वहुत हर्षाती है।

यज्ञ-भूमि में जाकर लेकिन-
देखा बस अपमान मिला,
पिता-हृदय में शिव की खातिर-
तनिक नहीं सम्मान मिला।

सहसा उसने क्रोध-विवश हो-
योग-अग्नि को ज्वलित किया,
अपनी दे आहूति, पिता से-
उसने बदला तुरत लिया।

हाहाकार मचा जन-जन में-
सकल यज्ञ विध्वश हुआ,
दक्ष प्रजापति का क्षण भर में-
अस्त भाग्य- अवतश हुआ।

शकर ने ले सती वपुष को-
भीषण ताण्डव नृत्य किया
सति की देह धरे काधे पर-
परम अलौकिक कृत्य किया।

वही देह कट-कट कर भू पर-
जहाँ-जहाँ गिर पाई थी,
शक्ति-पीठिका वहीं भुवन में-
पुण्यमयी बन आई थी।

✦ ✦ ✦

हिंगलाज में ब्रह्मरन्ध्र ही-
सती का भू पर गिरा प्रथम,
इसीलिए यह क्षेत्र धरा पर-
पुण्यमयी है आज चरम।

हिंगलाज देवि अधिष्ठात्री-
आज स्वय इस जगती पर,
उनकी करूणा से आप्यायित-
जन-जन है इस धरती पर।

✦ ✦ ✦

उनके आगे शीश झुका कर-
मन से उनका नमन करें,
उनके पुण्य-प्रताप-सुयश का-
प्रतिदिन हम सब भजन करें।

छठा पुष्प

जय-जय माते हिंगलाज तू-
चरण-कमल दे अपना ले
शीश नवाता हूँ मैं मइया-
सशय-सभ्रम-सपना ले।

कुछ भी अपना रहे न मेरा-
सब कुछ तुझ पर वार चलूँ,
तेरी करुणा के साँचे में-
अपना तन-मन ढाल चलूँ।

चाह रहा चरणों पर सब कुछ-
धर कर निर्भय हो जाऊँ,
तेरे सात्त्विक विभा लोक में-
अपने मन-से खो जाऊँ।

अपने-पन का भाव न जागे-
मन भी तेरा हो जाए,
तेरा ही यश कीर्त्तन जग के-
प्राण-प्राण में लहराए।

दृष्टि जहाँ भी देखे दृग में-
दृश्य तुम्हारा खिल आए,
तेरी छवि में मेरा अपना-
सब स्वरूप माँ, मिल जाए।

ऐसा हो मैं रहूँ न तिलभर-
तुम ही केवल रह जाओ,
पवन-पवन के हर प्रवाह में-
बात हृदय की कह जाओ।

जब तक मेरा मेरा है यह-
अपने-पन का भेद भरा,
तब तक कष्ट अपार जगत में-
रहता है भव खेद भरा।

अपने-पन की इस तृष्णा को-
मइया मुझ से दूर करो,
मन के अन्ध गेह में उतरो-
अपना विमल प्रकाश भरो।

भटक रहा हूँ जाने कब से-
जनम-जनम का हत-भागा,
राह न कोई मिल पाती है-
जब से तूने है त्यागा।

तुम तो करुणा-वरुणालय हो-
मुझ पर कण-भर दया करो,
डूब रहा हूँ गहन गर्त में-
बढ़कर मइया हाथ धरो।

जब तक तेरी कृपा न होगी-
पार नहीं मैं जा सकता,
तेरी स्निग्ध कृपा को पाकर-
तव चरणों तक आ सकता।

भटक रहा हूँ जनम-जनम से-
और नहीं अब भटकाओ,
मरघट-से जलते जीवन पर-
रस-पियूष माँ बरसाओ।

द्वैत-बुद्धि है जब तक तब तक-
प्राप्त न होगी राह सही,
नित्य-अनित्य-अनादि तत्त्व की-
होगी कुछ पहचान नहीं।

दृष्टि खुलेगी तभी कि जब तुम-
आँजन दृग में कर जाओ,
गहन तिमिर-भव-बन्ध खोलकर-
ज्योति-रूप माँ, दिखलाओ।

अपनी कोई शक्ति नहीं है-
नहीं कभी कुछ कर सकता,
मैं तो तेरे चरण-कमल पर-
केवल मस्तक धर सकता।

द्वैत-बुद्धि का नाश करो माँ-
सुगम पथ अब दिखलाओ,
जनम-जनम से भटक रहा हूँ-
और नहीं माँ भटकाओ।

जब-जब बढ़ते असुर धरा पर-
नाश धर्म का होता है,
पड़कर अत्याचारों में जब-
मानव का मन रोता है।

तब-तब माते, आकर भू पर-
सब कल्याण किया करती,
धर्म-भाव से पोषित मन को-
सब सम्मान दिया करती।

✦ ✦ ✦

आज पुन धरती पर देखो-
दुर्दिन ने आ घेरा है,
देखो, आज चतुर्दिक भू पर-
महानाश का फेरा है।

आओ, माँ मैं शीश नवाता-
भूतल का उद्धार करो
मरणासन्न प्राण में माते-
नवजीवन सचार करो।।

सातवाँ पुष्प

हिंगलाज की करुणा का कण–
पल-पल यहाँ बरसता है,
मरु-थल का यह शुष्क क्षेत्र भी–
रस से मधुर सरसता है।

ऐसा है यह क्षेत्र कि सब दिन-
ऊसर जगता रहता है,
लगता अन्तर की ज्वाला से-
इसका कण-कण दहता है।

भीषण आतप से इस भू को-
मिलता क्षण भर त्राण नहीं,
फूल न खिलते थे, भौरों का-
होता था मधु-गान नहीं।

चारण-गण थे यहाँ कि जिन के-
दुख का था कुछ छोर नहीं,
उनको मिलती थी इस भू पर-
करुणा की मृदु कोर नहीं।

लेकिन जब से आए थे ये-
हिंगलाज की सेवा में
शनै-शनै सब प्राप्त हुआ था-
उनको स्वत स्वमेवा में।

हिंगलाज ही आदि शक्ति है-
सब कुछ को करनेवाली,
वही एक है इस धरती पर-
सब का दुख हरनेवाली।

चारण-गण में बड़ी प्रतिष्ठा-
है अपनी इस माता की,
इनके कारण ही पाई है-
करूणा विश्व-विधाता की।

यही शक्ति है, निर्बल को भी-
बल प्रदान जो करती है,
उनके सूने अन्तस्तल को-
परम ज्योति से भरती है।

इनके कारण मनुज धरा पर-
सुख से सदा विचरता है,
इनका बल सबल पा कोई-
नहीं किसी से डरता है।

आद्या-शक्ति यही हैं भू की-
यही रूप है ज्ञानमयी,
इनके कारण ही इस भू पर-
विद्या आई नयी-नयी।

इनके बल से चारण जन भी-
बने शक्ति के स्वामी हैं
सर्वशक्ति दात्री यह माता-
सब की अन्तर्यामी हैं।

इसने ही चारण जन में शुभ-
पौरुष का सचार किया,
इसने उनके अन्तर-तर में-
अभय शक्ति का दान दिया।

हर चारण के अन्तर-मन में-
यही देवि नित बसती हैं,
हर प्राणी के हृदय-कमल पर-
सौरभ-सरिस बिहँसती है।

इनके कारण नयी-नयी ही-
राह सबों ने पाई है,
बहुत दिनों से शुष्क पड़ी अब-
मन-कलिका मुस्काई है।

चारण-जन की आद्य देवि है-
हिंगलाज इस धरती पर,
वही किया करती है सब कुछ-
जीवन-रण में हो तत्पर।

महाविकट सकट में उनकी-
कृपा दिखाई पड़ती है,
उनकी ध्वनि सन्नाटे में भी-
सदा सुनाई पड़ती है।

ऊसर भू पर रस की वर्षा-
सदा वही कर जाती है,
गहन तमिस्रा में भी बनकर-
ज्योति नयी मुस्काती है।

इनका ही अवतार हुई हैं-
करणी माता भूतल पर,
इनकी ही हम कृपा जोहते-
जीवन में हर पल-पल पर।

✦ ✦ ✦

जय माँ करणी जगत विधात्री-
करुणा-कण माँ बरसाओ,
ऊसर-धूसर भू-अचल को-
सरस स्नेह से सरसाओ।।2

आठवाँ पुष्प

माता करुणामयी सदा है—
भक्ति-शक्ति दृढ़ ज्ञान-प्रदा है।
उसकी अतुलित कृपा डोर से-
सिन्धु अतुल औ व्योम-छोर से-

यही सदा गुंजित है क्षण-क्षण-
यही एक है सबका जीवन।
उसे छोड़ कुछ और नहीं है
भव में कोई ठौर नहीं है।

माता सब कुछ स्वय देखती-
भाग्य-विभव सब खुद परेखती।
उससे कुछ भी छूट न पाता
बन्धन कोई टूट न पाता।

जिसकी होती जहाँ जरूरत
वहीं झलकती उसकी सूरत।
दिशा-दिशा में है आच्छादित-
उसकी आभा ज्ञान-समन्वित।

सभी ओर है ज्योति उसी की-
वस्तु बिना उसके सब फीकी।
वही दृष्टि है इस भव जग की-
परम चेतना जीवन मग की।

जब भी जो आवश्यक होता
बहता निर्मल करुणा-सोता।
पूर्व क्षितिज पर जब मुस्काती-
ऊषा अपना रूप दिखाती

उसकी ही छवि शोभाशाली-
बनती है अम्बर की लाली।
दिन में सूरज जब चढ़ जाता-
सिर पर ऊपर तक बढ़ आता,

बनकर तब मार्तण्ड गगन में-
वही बिहँसती हर श्रम-कण में।
सध्या की झुरमुट में लुकछिप-
उसकी ही छवि दिखती दिप-दिप।

रजनी में बन चाँद-सितारे-
रही गगन को वही सँवारे।
निद्रा है उसकी ही चादर-
जिसमें सोता निखिल चराचर।

ऋतुओं में भी वही बिहँसती-
हर क्षण बनकर नेह बरसती।
वही स्वय मधुमास बनी है,
पुष्प-पराग-सुवास बनी है।

फूलों की पँखुड़ी पर लाली-
उसके नयनों की उजियाली।
पत्ती-पत्ती में खिलती है,
सब से गले-गले मिलती है।

काँटों तक को सरस बनाती-
कोयल स्वर में गीत सुनती।
फिर निदाघ जब भू पर आता,
आतप का जब रूप दिखाता-

उसकी लू-अधड़ में देखा-
लिखती वही भाग्य का लेखा।
जन-जन के मन व्यग्र-सदन में,
वही विहँसती जीवन-रण में।

दाह-निदाघ धरा पर बनकर-
गुजित भू पर उसका ही स्वर।
कण-कण का तप-तप कर जलना-
उसकी ही है केवल छलना।

सभी रूप औ' सभी रग में-
सकल सृष्टि के अग-अग में-
वही व्याप्त है एक रूप में-
वही छाँह में वही धूप में।

हास-रूदन है उसकी आहट-
पूर्ण उसी से जीवन का घट।
फिर वर्षा जब आती भू पर-
निर्मल जल का सोता सत्वर-

वही धरा पर दे जाती है,
विजयी जैसे मुस्काती है।
अम्बर में घनघोर सघन घन-
मन-मयूर का चचल नर्त्तन-

उसका ही है पट परिवर्तन,
पी-पी-स्वर है उसका गायन।
बूँद-बूँद जल छहर-छहर कर-
भूतल-तल पर बिखर-बिखर कर-

हास-विलास चपल दिखलाते-
उसकी छवि अन्तर में लाते।
दादुर-ध्वनि में राग सुनाते,
मरुथल में भी फूल खिलाते।

ऐसा कोई अश न भू का-
वर्षा में प्रति छवि जो लू का।
सभी डाल पर हरियाली की-
छटा उसी की शुभ लाली की।

माँ करणी ही सभी तत्त्व में-
तन्मात्रा औ सभी सत्त्व में-
प्रतिभासित है एक रूप-सा,
अपने पावन नव स्वरूप-सा।

उसकी हम सब जय-जय बोलें,
उसके ही हम अपने होलें।
क्षण-क्षण तभी सुधर पाएगा-
मृत में जीवन लहराएगा।

जय-जय करणी माते। जय-जय।
कर दे भू को निर्मल-निर्भय।।

नववाँ पुष्प

जयति भवानी करणी माता
तेरी जय का गीत सुनाता।
मरु प्रदेश यह बड़ा विकट था
पग-पग पर भीषण सकट था।

जहाँ देखिए वहीं भयानक,
संघर्षों में थे सब नायक।
नहीं किसी से कोई कम था,
सब घातक औ' घोर विषम था।

अत्याचार चरम सीमा पर-
नृत्य-निरत था भू भीमा पर।
लूट-खसोट मची थी घर-घर-
सब में था उत्पीड़न का स्वर।

भैंस उसी की लाठी जिसकी-
मौत मात्र थी जिसकी-तिसकी।
सब में भीषण दम्भ भरा था,
मन में सब के शूल गड़ा था।

सभी व्यग्र थे अपने-पन में,
सिसक रहे थे महामरण में।
सभी नागरिक बिलख रहे थे,
सब ने क्लेश अशेष सहे थे।

कोई दुख से अलग नहीं था
कहीं रोग, तो मरण कहीं था।
दैवी-विपदा तो सब सहते
उसकी बातें कभी न कहते।

लेकिन जब मानव-मानव को-
देता केवल दुख-उद्भव को।
बड़ा मनुज छोटे को खाता,
मत्स्य न्याय की सीख बताता।

दुर्बल जब निर्विघ्न न रहते,
दुख-ही-दुख जब भू पर सहते।
तब खुद धरती भी अकुलाती,
उत्पीड़न का भाव जताती।

रूप बदलता मानवता का-
गिर जाती है उच्च पताका।
हृदय-हृदय में क्षोभ जलन का-
उठता कुत्सित धुआँ मरण का।

तब इसकी रक्षा की खातिर-
देवी आती भू पर फिर-फिर।

✦ ✦ ✦

विकट हाल था मरू प्रदेश का-
कण-कण पीड़ित था सुदेश का।

सभी राज्य लड़ते रहते थे
भीषण ज्वाला में दहते थे।
कहीं किसी में प्रेम नहीं था,
भव में कोई नेम नहीं था।

उच्छृखल थी हवा वहाँ की
आँधी आती जहाँ-तहाँ की।
कोई करता पदाक्रान्त था
कोई रखता सदा भ्रान्त था।

ऐसे में जन-जीवन बिखरा-
कहीं न दिखता था कुछ निखरा।
शून्य भाव-से जाग रहे थे-
शुभ्र तत्त्व सब त्याग रहे थे।

धरती बड़ी प्रताड़ित रहती
अत्याचारों का दुख सहती।
क्रन्दन औ' उत्पीड़न का स्वर-
गुंजित रहता था निशि-वासर।

ऐसे में ही हिंगलाज ने-
मरू प्रदेश के विमल ताज ने-
सोचा भू-उद्धार करेंगी
तिमिर-क्षेत्र में ज्योति भरेंगी।

✦ ✦ ✦

माँ करणी का रूप सजाकर
हुई स्वयं अवतरित धरा पर।
हिंगलाज-अवतार-समुज्ज्वल
करणी माँ ही हैं भू-सबल।

इन्हें हृदय से नमन करें हम,
इनके पद पर शीश धरें हम।
यही भुवन-उद्धार करेंगी,
सबका वेड़ा पार करेंगी।

जय-जय जय-जय करणी माता।
आशिष दो जग शीश नवाता।।

दसवाँ पुष्प

माँ करणी की शुभ्र कथा है,
कहते हम यह यथा जथा है।
करने को माँ का ही वन्दन,
अर्पित करता सारा जीवन।

भव में कुछ भी और न पाऊँ,
माँ के यश का गीत सुनाऊँ।
यही चाह है मेरे मन की,
रात मिटेगी जन-जीवन की।

दिन का जिससे हो उजियाला,
कटे अँधेरा बन्धन वाला।
मुक्त धरा हो, मुक्त गगन हो,
मन के खग का नव गुंजन हो।

कहीं न कोई हो उत्पीड़न,
दुख से कहीं न होवे क्रन्दन।
रहे न दृग में आँसू के कण-
कदाचार का कोई अंजन।

आनन कहीं न हो मुरझाया
रहे न जीवन-भव भरमाया।
सभी तरफ नव जीवन का स्वर,
उतरे भू पर बनकर भास्वर।

मिटे द्वेष-दशन की लीला
दृग हो कहीं न कोई गीला।
सब में हँसी-खुशी हो छल-छल,
खिला रहे अन्तर का उत्पल।

व्यक्ति-व्यक्ति में राग सुसज्जित,
अन्तर-तर हो प्रेम निमज्जित।
करूणा-सबल से हो पूरित
भव का जीवन लोक-समन्वित।

मानव-मानव में जब मन का-
प्रेम जगेगा शुभ जीवन का।
तभी धरा फिर मुस्काएगी,
किरण शान्ति की भी आएगी।

व्यवित-व्यक्ति के सद्विचार से,
हृदय-हृदय के मृदुल प्यार से।
मानवता का राग जगेगा,
विभ्रम का मन बोझ न लेगा।

स्वय प्रकृति भी निखर पड़ेगी-
माँ की आशिष सिर पर लेंगी।
साथ मनुज का देगी हर क्षण,
होगा सभी तरह जग पावन।

आज प्रकृति जो कुपित हुई है
मन से क्रोधित अमित हुई है।
यह है दोष मनुज का केवल
मन उसका है हर पल चचल।

मन की गति केन्द्रित करती है,
भय में शक्ति विमल भरती है।
इस दुर्गम पथ पर चलने में-
सात्विक ढाँचे में ढलने में।

करणी माँ ही सम्बल देगी-
उर्ध्वमुखी जीवन-बल देगी।
जिससे भव का सुमन खिलेगा,
स्नेह-सुगति-सौहार्द मिलेगा।

आज कमी है इसकी जग में-
मिलता कहीं न इस जग-मग में।
इसीलिए करणी माता का-
भीषण दुख हरणी माता का।

करते हैं अभिनन्दन मन से
रक्षा कर माँ, करूणा-कण से।
एक किरण दो तिमिर मिटेगा
जग में नव आलोक जगेगा।

✦ ✦ ✦

हिंगलाज ने करणी माँ का-
रूप लिया दुख हरणी माँ का।
उनको वन्दन करता हूँ मैं,
शीश चरण पर धरता हूँ मैं।

ग्यारहवाँ पुष्प

दिवा-रात्रि उसके हर स्वर में-
मुखरित रहती छन्द प्रखर में।
जिसकी रूप-विभा का लघु कण-
निखिल सृष्टि का है आलोड़न।

भृकुटि-विलास-मात्र से सत्वर-
होते सब परिवर्तन भू पर।
उसके इगित पर निशि-वासर-
दृश्य प्रकृति का दिखता सुन्दर।

वही शक्ति आराध्य भुवन की-
प्रीति प्रतीति बनी जन-जन की।
शीश वहीं सब का है झुकता-
वहीं कुरग हृदय का रुकता।

उसकी गाथा नव विकास के-
पृष्ठ समन्वित रुदन-हास के।
उसकी दया बरसती हर क्षण-
तृप्त उसी से रहता जन-मन।

मरु प्रदेश का सूखा टीला
वर्षा करती उसे न गीला।
वारिद यहाँ न आकर गाता-
इस भूतल की प्यास बुझाता।

सूखा रेगिस्तान क्षेत्र है-
यहाँ न मिलता हरित वेत्र है।
बजरी औ' रेती के टीले
मिलते जैसे पथ हठीले

उस प्रदेश के सरल निवासी-
कष्ट सहन के थे अभ्यासी।
कंकड़-पत्थर-रेत उड़ाकर
रोष दिखाती आँधी आकर-

सभी लोग घर में छिप जाते,
किसी तरह मुँह-आँख बचाते।
हाथों से आनन को ढँक कर-
मात्र भरोसा करते प्रभु पर।

बड़ा विषम जीवन जीना था-
कठिन हलाहल ही पीना था-
जीने के सब द्वार बन्द थे,
शीतल जीवन पवन मन्द थे।

जलन ज्वाल ही भाग्य बना था,
मृत्यु-खड्ग सब ओर तना था।
शान्त न कोई रह पाता था,
सब जन का मन पछताता था।

वहीं एक चारण के कुल में-
सुरभित मानस-स्निग्ध-मुकुल में-
हिंगलाज ही सुख की दात्री-
बनकर आई भाग्य-विधात्री।

मेहाजी-घर गोत्र कीनिया-
थीं प्रकटी बनकर दीप्त दिया।
देवल माँ के पुण्य उदर से-
आई देवी तप प्रहर से।

गाँव सुआप सुशोभित सुन्दर-
बना तीर्थ-सा पावन अघ-हर।
माँ का पुण्य प्रताप जगा है
ध्यान सभी का यहीं लगा है।

बड़े पुण्य से भू पर कोई-
शक्ति मती जगती है सोई।
मरू-प्रदेश पर सघन मेह थे,
उजड़े-उजड़े गेह-नेह थे।

प्रकृति कुपित थी, व्यक्ति-व्यक्ति भी-
बिखरे होकर दलित-शक्ति भी।
दश-षट राज्यों के घेरे में-
बँटे-बँटे सब थे घेरे में।

कहीं तनिक सौहार्द नहीं था-
घृणा कहीं थी, द्वेष कहीं था।
मार-काट व्यभिचार बढ़ा था,
सब में दम्भी नशा चढ़ा था।

निर्बल को सब सता रहे थे,
अपनी सत्ता जता रहे थे।
ऐसे में नव शक्ति जगाने-
जीवन जय का पाठ पढ़ाने-

जन-जन को उत्साहित करने-
सात्विक शक्ति समाहित करने-
माता स्वय धरा पर आइ-
नयी किरण बनकर मुस्काई।

धरा धन्य, गणवत बनी है-
सभी तरह शुचिवत बनी है।

बारहवाँ पुष्प

प्रभा प्रेम की ले अरूणाई-
शक्मिती माँ भू पर आई।
    चारण कुल में शुभ उद्भव था-
    प्रुण्य-प्राप्ति का नव अनुभव था।

देवल माँ ने देख लिया था,
सात्विक दृश्य परेख लिया था।
सपने में आभास मिला था,
अपनापन विश्वास मिला था।

शक्ति अलौकिक उतर रही है
जान रही थी बात सही है।
छ बहनें थीं पहले से ही-
प्रेम-मूर्त्ति-सी परम सनेही।

किन्तु आज तो नयी किरण ने-
जन्म लिया था सत्य-वरण ने।
जान रही थीं शक्ति अलौकिक,
उतर रही है निर्मल सात्विक।

इसीलिए माँ शान्त बनी थी
महाभाव से सिक्त-सनी थी।
उसमें कुछ अनुभाव नहीं था
किसी तरह का भाव नहीं था।

सब है प्रभु की लीला अद्भुत
अंग-अंग में थी नव विद्युत।
लौ से दीपक स्वयं लगा है,
मन में नूतन भाव जगा है।

लेकिन घर की कुछ महिलाएँ-
कैसी थीं? हम क्या बतलाएँ?
उनके मन में क्षोभ भरा था,
दृग में विस्मय कण उभरा था।

एक बुआ थीं वृद्धा घर की,
स्नेहिल-प्रेमिल सब घर भर की।
वे भी कुछ उद्विग्न-हृदय थीं,
विविध भाव की मति-सचय थीं।

कन्या आई, जान अचानक,
क्षुब्ध-भाव की हो परिचायक-
बोलीं- अब की भी है 'मेढी,
कहते हुई उँगलियाँ टेढ़ी।

उँगली से सकेत जता कर-
'मेढ़ी' बोलीं थीं अकुलाकर।
सहसा टेढ़ी हुईं उँगलियाँ
लगी झाँकने तुरत बगलियाँ।

ऐसा अद्‌भुत चमत्कार था-
भव को दैवी समाचार था।
इसे देख सब दग हुए थे,
सब के फीके रग हुए थे।

लेकिन देवल माँ के मन में,
महाभाव था अपनेपन में।
नहीं तनिक उद्विग्न हुई थी,
क्षणभर कभी न खिन्न हुई थी।

जान रही थी परम शक्ति की,
आभा उतरी दैव-भक्ति की।
शान्त-भाव में रही समन्वित-
हुई न पलभर विचलित किंचित।

मन-ही-मन क्षण भर को रूक कर-
किया प्रणाम हृदय से झुक कर।
करूणा-से अभिभूत हुई वह-
लाजवती-सी छुई-मुई वह।

लगी नयन से नीर बहाने,
मन में सात्विक राग जगाने।
बोली- अपने आप बुआ-से-
कुशल रहेगा दैव-दुआ से।

यह करनी है परम शक्ति की-
खोज जगी है उसी भक्ति की।
वही काम सब ठीक करेगी,
रिक्त कोष को वही भरेगी।

उस पर ही विश्वास करें हम-
कभी न फिर उपहास करें हम।
जीवन का क्रम अविरल चलता
मन ही प्रतिपल सबको छलता।

रुदन-हँसी-उपहास-लास सब-
उसी शक्ति का है विलास सब।
जिसने उसको जान लिया है
अन्तर से पहचान लिया है।

उसमें भेद न कुछ आ पाता
समता-भाव वहाँ मुस्काता।
बालक हो या रहे बालिका-
बने सृष्टि की सब सुपालिका।

इसमें ही आनन्द भरा है
प्रमुदित सब से वसुन्धरा है।
आओ, परम शक्ति के आगे-
हम अभिमान हृदय का त्यागें।

अह भाव हम खोकर अपना-
सत्य बनाएँ भू का सपना।
सृष्टि-नियता शक्ति शुभेश्वर-
उतरी है नव ज्योति शुभकर।

आत्मिक बल वह देगी मन में-
फूल खिलाएगी जीवन में।
उसको मन से नमन करें हम,
उसका पावन भजन करें हम।

कलुष हृदय का मिट जाएगा,
नया प्रकाश पुन आएगा।।

तेरहवाँ सर्ग

पावन शुभ गगोत्री-जैसी-
देवल माँ थीं बिलकुल वैसी।
मन में कोई भेद नहीं था-
किसी तरह का खेद नहीं था।

परम सुपावन स्नेह-भरित थी
निर्मल-मन से देवि-चरित थी।
कन्या है तो सोचो क्या है?
गौरव यह इस भूतल का है।

सच मानो, यह पुण्य-वती है,
विभामयी शुभ यशोमती है।
इसके यश की विमल पताका-
होगी धर्म-भाव की साका।

इसकी तुरत बलैया ले लें,
शका के हम दश न झेलें।
इसने लीला अह दिखाई-
हम सबको नव सीख बताई।

कभी किसी का करें न निन्दन-
करें सभी का हम अभिनन्दन।
सृष्टि मच है प्रभु का निर्मल-
करते अभिनय सब जन प्रतिपल।

जिसको जो कर्त्तव्य मिला है
उसका वैसा सुमन खिला है।
भिन्न-भिन्न हैं पात्र सभी जन-
क्षण-क्षण होता पट-परिवर्त्तन।

सभी भूमिका निर्धारित है
परम शक्ति से परिचालित है।
पटाक्षेप कब इसका होता?
यह है सब दिन बहता सोता।

व्यक्ति भूमिका अपनी करके-
मच छोड़ते हैं इस घर के।
किन्तु मच तो सदा लगा है,
जगत-नाट्य यह सदा जगा है।

समय काल का यह प्रवाह है,
गहन भाव-सा यह अथाह है।
कब से ससृति-शिलष्ट नाटिका-
चलती खिलती पुष्प-वाटिका?

कौन भला कह सकता जग में-
कब से चलता पग इस मग में?
सूत्रधार के इगित पर ही-
बजती सब की जीवन-तुरही।

अपना कोई भाव न रहता-
विवश मनुज है सब कुछ सहता।
कभी अश्रु भर आते दृग में-
हँसी कभी है मन के मृग में।

सब कुछ सूत्रधार है करता
वही मात्र सूने को भरता।

✦ ✦ ✦

सोचा क्षणभर देवल माँ ने
लगी खुशी का दीप सजाने।

घर में उत्सव-साज सजाया-
विप्र-महाजन को बुलवाया।
तरह-तरह के राग-रंग में-
जागे सब जन नव उमंग में।

विधिवत सब उपचार कराया
जातक का संस्कार कराया।
नामकरण भी हुआ सुजाना-
रघुबाई है नाम सुहाना।

✦ ✦ ✦

पूगल के थे राव अचानक-
शेखावाटी आए उन तक।
सुनकर उनकी अद्‌भुत लीला-
चमत्कार के रस से गीला।

सैन्य-सुदल के साथ पधारे-
शीश झुकाने उनके द्वारे।
करणी माँ मिल गयी राह में-
बोलीं- सब हैं विपुल चाह में।

दही-बाजरे की रोटी थी-
पास यही गठरी छोटी थी।
लेकिन माँ ने वहीं खिलाया,
सैन्य सुदल खा खूब अघाया।

उतने में ही सब जन खाकर,
लौट रहे थे शिक्षा पाकर-
परम शक्ति कुछ भी कर सकती,
उसके वश में है नभ-धरती।

माँ का पुण्य प्रताप देखिए,
उनकी महत विभूति लेखिए।
उनके चरण-कमल का जो भी-
आया बनकर भौंरा लोभी।

उसको सब कुछ सहज प्राप्त है,
वैसा ही जन स्वय आप्त है।
इसीलिए हर क्षण हम गाकर,
करणी माँ का भजन सुनाकर-

अपना जीवन पावन कर लें,
सृष्टि-दृष्टि मनभावन कर लें।
जय-जय बोलो माँ करणी की-
शान्ति दायिनी दुख-हरणी की।।

चौदहवाँ पुष्प

करणी माँ की निर्मल प्रतिभा-
करूण हृदय की दैवी-श्रुत-भा।
अपनी विभा विखेर रही थी-
भू पर अमृत-धार बही थी।

बचपन से वह ज्योति अलौकिक-
फैल रही थी अविरल सात्विक।
साठिका ग्राम के केलू के सुत-
बीठू देपाजी थे अद्भुत-

उनसे उसने ब्याह रचाया,
गार्हस्थ्य रूप निज दिखलाया।
दिया यही सदेश कि भू पर-
नहीं गृहस्थ से कोई ऊपर।

यही एक आश्रम है ऐसा-
मिलता भव में कहीं न जैसा।
इसमें रहकर मानवता की-
सेवा की धुन मिलती बाँकी।

और अन्य आश्रम में जीवन-
होता केवल अपना पावन।
सेवा में जो सुख मिलता है,
उससे मन-शतदल खिलता है।

जीवन का सदेश यही है-
परम सत्य अवशेष यही है।
कहते सब जन वे थे नीके-
चार पुत्र थे माँ करणी के।

लोक कथन जो श्रुति कहलाती-
परम्परा से जो है आती-
उसकी मति से एक उक्ति है-
करणी जी की वहन भुक्ति है।

देपाजी ने ब्याह दूसरा-
था किया पुन उत्साह भरा।
कहते माँ करणी की मति से-
वहन गुलाबी की सहमति से।

थे सब कर्म हुए थे अभिनव,
खिले हृदय के पल्लव नव-नव।
इतना तो है सत्य कि धरती,
परम शक्ति का अनुगम करती।

युग-युग से चलती आती है,
बिखर-बिखर कर सज जाती है।
इसके क्रम का अन्त नहीं है,
क्षण विराम का नहीं कहीं है।

सम्भव है यह, सत मनस्वी-
करणी माता परम तपस्वी-
समझ रही होंगी इस भव में-
भोग-राग हैं सब उद्भव में।

उनको इसकी चाह नहीं थी,
भोगों की परवाह नहीं थी।
किन्तु और जन इससे हटकर-
कैसे इससे रहते कटकर।

उनकी काया प्यासी होगी-
ममता की अभिलाषी होगी।
इसीलिए तो सोच-समझकर-
करणी माँ ने होकर तत्पर।

उनका ब्याह कराया होगा,
उनका विश्व सजाया होगा।
परम शक्ति जब जग में आती,
अपना निर्मल खेल दिखाती।

माया का जो रूप सुहावन-
होता परम शक्ति से पावन।
इससे संसृति को पथ मिलते,
जीवन के अनगिन दल खिलते।

परम शक्ति जब भव पर आती,
आकर सबकी क्लान्ति मिटाती।
जहाँ शिथिलता आती [illegible]
करती है जन-जन [illegible]।

यों तो यह ससार बड़ा है,
दैवी-बल से सदा खड़ा है।
ध्वस्त नहीं अब तक हो पाया,
कहीं न इसका दल मुरझाया।

केवल भौतिकता तो जड़ है,
मिटने को काला पत्थर है।
पर इसमें अध्यात्म मिलन से-
आते हैं फिर नव जीवन से।

जीवन में जो शक्ति तत्त्व है,
अन्त-अन्त तक वही सत्त्व है।
उसे छोड़कर सभी दूसरे-
हैं फूटे मिट्टी के गगरे।

करणी माँ ने देखा जग में-
उथल-पुथल है इस भव-मग में।
लाने को ही उन्हें राह पर-
सब कुछ करने को थीं तत्पर।

दैवी-शक्ति जहाँ जो रहती-
सभी तरफ जो धारा बहती।
उसे स्वय ही सदा देखती-
उसे भाव में ही परेखती।

और तभी जो समुचित होता-
कभी नहीं जो अनुचित होता-
वही कर्म सब कर जाती है,
राह भुवन को दिखलाती है।

करणी माँ अवतार विमल हैं-
मरु-प्रदेश की प्राण-कमल हैं।
इनकी पाकर नयी प्रेरणा-
जागी सब में नयी एषणा।

भूतल को हम पुन सजाएँ,
मरु-प्रदेश में ज्योति जगाएँ।
शिथिल हुआ-सा जो जीवन था
लगता जो म्रियमाण विजन था।

उसमें कोलाहल जग आया,
उसमें नव जीवन लहराया।
करणी माँ की लीला अद्भुत,
देख सभी होते थे पुलकित।

हम भी आओ जय-जय गाएँ,
अपना मन-से उन्हें बनाएँ।
उनके चरण-कमल पर मेरे-
शीश रहे नित साँझ-सवेरे।

माँ का आशीर्वाद हृदय में-
निखरे मेरे सब अभिनय में।
जय माँ करणी जय जगदम्बे।
करुणाकर माँ जय-जय अम्बे।।

तुम ही माते शान्ति-दायिनी-
भक्ति-मुक्ति शुभ कान्ति-दायिनी।।

/ः

पन्द्रहवाँ पुष्प

सृष्टि-नियता ने इस भू पर-
अनगिन मूर्ति उतारी,
बड़े यत्न से छवि मानव की-
उसने किन्तु सँवारी।

बड़ी लगन से कला-सुसेवित-
भूतल पर नर आया,
इसकी निर्मिति में ब्रह्मा ने-
कौशल खूब दिखाया।

इस प्राणी ने ही विवेक की-
एक धरोहर पाई,
जिससे अच्छे और बुरे की-
शिक्षा उसमें आई।

सत्य-असत्य-ज्ञान इस जग में-
देन मनुज की मानो,
नीर-क्षीर का ज्ञाता भू पर-
नर को ही पहचानो।

मानव है वह रूप कि जिसमें-
सभी तत्त्व हैं दिखते,
नर में ऐसी शक्ति कि अपने-
भाग्य लेख खुद लिखते।

जिस नर में जब सद्-विचार की-
पावन लहरें जगती,
उस क्षण उसकी मति-गति में नव-
विभा उभर कर हँसती।

किन्तु जहाँ पर कदाचार की-
आग सुलगने लगती,
उस क्षण उसमें नरकपुरी की-
दाह दहकने लगती।

नरक-स्वर्ग औ' पाप-पुण्य की-
गठरी लेकर मानव,
प्रतिक्षण खेल दिखाता रहता-
सृष्टि मच पर अभिनव।

अपना कुछ भी यहाँ न उसका-
सूत्रधार जो करता,
वैसा ही यह खेल दिखाकर-
हँसता-रोता-मरता।

किन्तु इन्हीं मानव-श्रेणी में-
श्रेष्ठ जीव जब आते,
वे ही तब झकझोर जीव को-
सच्चा मार्ग दिखाते।

वे ही अमर-रूप हैं जग में-
दैव-शक्ति अभिधाता,
उनके ही वश में रहते हैं-
शकर-विष्णु-विधाता।

विधि बनकर वे सृजन-कार्य में-
अपनी शक्ति लगाते,
विष्णु-रूप वे पालन करते-
शिव बन सृष्टि मिटाते।

दानव-शक्ति उभरती जब भी-
दैव-शक्ति तब जगती,
उसे मिटाने को ही तत्क्षण-
ज्वाला दिव्य सुलगती।

उसे मिटाकर पुन पुण्य का-
उपवन नूतन सजता,
नई सृष्टि के ज्योतित स्वर में-
शख सुपावन बजता।

धर्म-भाव स्थापित होता-
पुण्य-वर्त्तिका जगती,
रूग्ण पड़ी जीवन की लतिका-
स्वत विहँसने लगती।

जब-जब जो अवतार हुए हैं-
यही घोषणा की है
पुण्य-व्रती हो धरा मनुज की-
यही एषणा की है।

धर्म-भाव-सस्थापन ही है-
महा शक्ति की इच्छा,
इसीलिए हर क्षण जन-जन की-
लेती सदा परीक्षा।

इसी कर्म-व्यापार-धार में-
सब अधर्म मिट जाता,
जो भी बचता पुण्य-सलिल में-
सरसिज-सा मुस्काता।

मानव तो बस कठपुतली-सा-
खेल खेलता रहता,
वर्षा-आतप-शीत-घाम जो-
आता उसको सहता।

अपने-पन से कर क्या सकता-
कोई और नियता,
ऐसा है जो जीवन देता-
लेता बनकर हता।

उसी शक्ति से जीवन का रथ-
रहता है परिचालित,
उसके ही इगित से रहता-
जीवन-धन अनुप्राणित।

उसी शक्ति से हर प्राणी में-
नूतन जीवन जगता,
मानव निज अस्तित्व धरा पर-
स्वत समझने लगता।

यों तो सव आते हैं जग में-
अपना खेल दिखाने,
क्षणभगुर इस रगमच पर-
जीने औ मर जाने।

लेकिन कोई-कोई आकर-
नव प्रकाश फैलाते,
उजड़ रही वसुधा को वे ही-
नन्दन रूप वनाते।

ऐसे मानव-पुगव में ही-
देवी करणी माता
मरु-प्रदेश में जीवन वनकर-
आई भाग्य-विधाता।

उनके यश के कीर्त्तन से ही-
वाणी पावन होती,
मानवता जगकर अन्तर का-
कलुष-पक सव धोती।

जय-जय माते करणी तू ने-
नव आलोक दिखाया,
भटक रहे मानव को तू ने-
सच्चा पथ बताया।

जय-जय माते करणी तेरी-
सब दिन गाथा गाएँ,
तेरे शान्ति-शिविर में आकर-
अपनी श्रान्ति मिटाए।।

ﺩ

सोलहवाँ पुष्प

माँ करणी के यश का कीर्तन-
जन-जन हैं दुहराते,
उनका पावन भजन सुनाकर-
अद्भुत पुण्य कमाते।

मइया की है गाथा जिसमें-
नारी-शौर्य-भरा है,
उनका पावन चरित धरा पर-
कुंदन-सा निखरा है।

जब भी कोई पुण्य-पथ में-
भीषण बाधा आई,
मातृ-शक्ति ने आगे बढ़कर-
उसको धूल चटाई।

कोई भी चट्टान सामने-
खड़ी नहीं रह पाई,
शक्तिमती के आगे उसने-
अपनी कीर्ति गँवाई।

✦ ✦ ✦

कुछ दिन बिता साठिका में फिर-
चली वहाँ से आगे,
गो-धन साथ लिए थीं, मानो-
ममता के हों धागे।

चारागाह मिलेगा ऐसा-
सोच जागलू आई,
वहाँ पहुँच कर कुछ ही क्षण तं
सब ने खुशी मनाई।

सहसा शासक कान्हा ने था-
अपना रोष दिखाया,
उस अन्यायी ने ही उस क्षण-
विघ्न अनेकों लाया।

कहा कि करणी, जाओ तुम सब-
यहाँ नहीं रह सकती,
यहाँ नहीं अधिकार तुम्हें यह-
शासक की है बस्ती।

करणी बोली- लो मजूषा-
पूजा की है देखो-
पहले इसे हटाओ, तब फिर-
अपनी शक्ति परेखो।

कान्हा ने हाथी से चाहा-
उसको तनिक हटा दें,
अपने शासक होने का फिर-
सबको रोब दिखा दें।

लेकिन टस-से-मस मजूषा-
तिलभर नहीं हुई थी,
कान्हा जी के बल को मानो-
नागिन कहीं छुई थी।

करणी माँ का कोप तनिक भी-
सहन न वह कर पाया,
कान्हा जी ने कुछ ही दिन में-
अपना प्राण गँवाया।

इनके बाद वहाँ रिड़मल ने-
शासन-भार सँभाला,
माँ करणी के क्रुद्ध हृदय की-
शमित हुई अब ज्वाला।

इनके पुत्र हुए जोधाजी-
ज्ञानी और विचारक,
ये थे करणी माता जी के-
मन से भक्त-उपासक।

करणी मइया से आशिष पा-
उनने सब कुछ पाया,
स्वय उन्होंने वहाँ जोधपुर-
सुषमित नगर बसाया।

माँ करणी ने शिला-न्यास भी-
खुद ही किया किला का,
माँ के यश से गूँज रहा था-
उनका पूर्ण इलाका।

दृग निश्छल, मन निर्मल होता-
भेद-भाव मिट जाता,
द्विविधा-शका-सशय-सभ्रम-
तनिक नहीं रह पाता।

✦ ✦ ✦

करणी माते शोक-नाशिनी-
तेरी जय-जय गाऊँ,
तेरे वदन-अभिनन्दन के-
शत-शत गीत सुनाऊँ।

सत्रहवाँ पुष्प

करणी माँ की गाथा तो है-
सुरसरि-हितकर पावन,
सत जनों के लिए सदा है-
मगल भव्य सुहावन।

मरु-प्रदेश की देवि-विधात्री-
का यश सब दिन गाएँ,
इनके कीर्त्तन और भजन से-
मन निर्मल कर जाएँ।

✦ ✦ ✦

रहीं जागलू में कुछ दिन फिर-
देशनोक माँ आई,
करके फिर उपकार भुवन में-
नूतन कीर्त्ति कमाई।

यहाँ नेहड़ी में लकड़ी को-
गाड़ा किया बिलौना,
खेल-खेल में पेड़ लगाए-
जैसे कोई छौना।

हरे भरे पेड़ों से सुस्मित-
क्षेत्र बना यह सुरभित,
लगता है ज्यों विटप छाँव में-
आभा दिखती ज्योतित।

हवा सुशीतल छनकर आती-
सब दुख-ताप मिटाती,
परम शान्तिमय भूमि वहाँ की-
सब का मोद बढ़ाती।

अन्तराल है आज समय का-
किन्तु वहाँ उस वेला,
हवा प्रदूषित रहे न जग की-
आया भाव अकेला।

आज यहाँ हम तरह-तरह की-
विधियों को अपनाते,
स्वच्छ रहे यह वायु इसी से-
पौधे-पेड़ लगाते।

मइया करणी ने इसको भी-
सोचा था पहले ही,
इसीलिए तो स्वय लगाए-
वृक्ष अतुल उसने ही।

आज तलक वह क्षेत्र बना है-
शीतल शान्ति-प्रदायक,
मनमोहन वह परम रम्य है-
सबके हित सुखदायक।

✦ ✦ ✦

कुछ दिन बाद यहाँ से थोड़ा-
हटकर मन से न्यारा,
एक जगह को माँ ने अपने-
हाथों खूब सँवारा।

कहते हैं बिन चूने-गारे-
उसको खूब सजाया,
लकड़ी से आच्छादित करके-
आश्रय नया बनाया।

बड़ी पवित्र बनी थी कुटिया-
सुन्दर और सुहावन,
जो भी इसे देखता कहता-
सचमुच है मनभावन।

आसपास हैं पेड़ अनेकों-
हवा सुशीतल आती,
चहक-चहक सब ओर अनेकों-
चिड़िया गीत सुनाती।

फुदक-फुदक कर रोज वहाँ पर-
आती है गौरैया,
वहीं ठहर कर दूध पिलाती-
बच्छे तक को गैया।

कैर-साँगरी-बेर-मतीरे-
काकड़िये हैं मिलते,
आक-खेजड़ी-बड़-पीपल के-
वृक्ष सुहाने दिखते।

परम शान्तिमय पावन निर्मल-
पूरा क्षेत्र बना है,
पेड़ों के पत्रों का अनुपम-
वन्दनवार तना है।

उषा उतर कर जब आती है-
यहीं प्रभाती गाती,
यहाँ धूल की कणिका तक पर-
अपना रूप सजाती।

फूलों के दल पर जब शबनम-
की बूँदें लहराती,
लगता ऊषा वन-देवी-सी-
मोहक नृत्य दिखाती।

पत्ती-पत्ती थिरक-थिरक कर-
बनती शोभाशाली,
बगिया लगती सब के मन में-
मोद जगानेवाली।

एक परम सात्विकता का ही-
भाव यहाँ पर जगता,
सब के मन में अहोभाव का-
राग थिरकने लगता।

दिन में सूरज की किरणों से-
गरिमा नयी उतरती,
श्रम में लगने को जीवों में-
आभा भव्य उभरती।

पशु-पक्षी औ' सव जीवों में-
नयी चेतना जगती,
नए-नए क्षेत्रों में वढने-
को ही दृष्टि मचलती।

सध्या में भी परम शान्ति के-
दर्शन ही हैं मिलते,
यहाँ सभी जीवों के अन्तर-
रहते प्रतिपल खिलते।

करणी माँ के इगित से ही-
मदिर यहाँ वना है,
करुणामय माँ का ही इसमें-
ममता-स्नेह-सना है।

✦ ✦ ✦

आओ, हम सव मन से झुककर-
माँ की आशिप पाएँ,
उनकी चरण-धूलि को अपने-
सिर पर तनिक चढ़ाएँ।

जय माँ करणी। जगत विधात्री।
सुख-प्रद माते जय-जय।
अभय-दान दो, माते। तेरी-
हम नित गाते- जय-जय।।

अठारहवाँ पुष्प

दिग्-दिगन्त तक करणी माँ की-
कीर्त्ति ध्वजा फहराई,
शीश झुकाकर सब ने उनकी-
दैवी गाथा गाई।

लोक-बीच रहकर भी वे थीं-
एक अलौकिक प्राणी,
सब का शुभ चिन्तन करती थी-
बनकर माँ कल्याणी।

वैर-द्वेष था नहीं किसी से-
सब थे उनके बच्चे,
उनका मगल होता जो भी-
आते मन से सच्चे।

जहाँ कहीं भी सकट दिखता-
उसको तुरत हटातीं,
हर कोई को शुभ विकास की-
राह वहाँ मिल जाती।

मरु-प्रदेश की सकल प्रगति में-
उनका हाथ रहा है,
उनके कारण ऊसर में सुख-
सौरभ विमल वहा है।

मिला राव बीका को उनका-
मगलमय जब आशिष,
तभी उन्होंने की थी अपने-
शुभ विकास की कोशिश।

करणी माँ के चरणों में रह-
कुछ दिन समय विताया,
तभी प्राप्त कर फल मन वाछित-
यश-गौरव सब पाया।

पूगल के ही राव समादृत-
शेखा जी की कन्या,
रग कुँअरी-सी हुई सुन्दरी-
इनकी पत्नी धन्या।

शेखा जी मुलतान जेल में-
कैदी थे शासक के,
बड़ा कठिन था उनका आना-
अपना सब कुछ रखके।

यहाँ शुभ्र शादी के अवसर-
पर वे कैसे आए?
इसी एक चिन्ता से सब जन-
व्याकुल थे घवड़ाए।

इसी समय करणी माता ने-
चमत्कार दिखलाया,
अपनी दैवी परम शक्ति का-
सब को भान कराया।

आनन-फानन करणी माँ जा-
खुद ही लेकर आईं,
कारागृह से शेखा जी को-
माँ ने मुक्ति दिलाई।

शुभविवाह की सारी रस्में-
हुई तुरत ही पूरी,
दैवी बल के सम्मुख रहती-
कब कैसी मजबूरी।

करणी माँ की देख कृपा यह-
सभी हुए आह्लादित,
माँ की ममता-स्नेह प्राप्त कर-
जन-जन हुए चमत्कृत।

जिसको माँ की करुणा मिलती-
उसकी क्या अनहोनी,
हस्तामलक उसे सब रहता-
क्या करनी, क्या होनी?

कन्या-दान किया शेखा ने-
जिस क्षण गद्-गद् मन से,
एक अलौकिक धार खुशी की-
निकली नयन-नयन से।

सब होकर आप्यायित क्षण में-
अपने शीश झुकाए,
मइया के चरणों पर सबने-
फूल विपुल बरसाए।

हाथ उठाकर मइया ने भी-
आशीर्वाद दिया था,
क्षण में शान्त सभी के मन का-
सब उन्माद किया था।

✦ ✦ ✦

बीका जी ने आशिष पाकर-
बीकानेर बसाया,
स्वय किले की नींव डाल कर-
पावन यश फैलाया।

इसी तरह जब-जब मइया की-
जहाँ जरूरत आई,
देखा सब ने उसकी दैवी-
शक्ति पड़ी दिखलाई।

परम भाव में जो रहता है-
उसकी बात निराली,
बनती उसके आनन की छवि-
अम्बर तक की लाली।

दिवा-रात्रि सब उसके इंगित-
पर ही तो हैं चलते,
सकल विश्व-ब्रह्माण्ड उसी के-
सम्मुख सदा मचलते।

उसकी जिह्वा पर रहती है-
स्वयं शारदा माता,
एक शब्द भी उसकी वाणी-
का है व्यर्थ न जाता।

चाँद-सितारे इंगित पाकर-
अपना पथ बदलते,
सकल सृष्टि के भाग्य उसी के-
हाथों सदा मचलते।

✦ ✦ ✦

माँ करणी सर्वेश्वर की ही-
शक्ति अतुल उतरी थी,
पुण्यलोक की नयी विभा-सी-
भूतल पर उभरी थी।

उनकी दृष्टि-मात्र से भू पर-
सब कुछ ही था सम्भव,
वे तो खुद ही कर सकती थी-
नयी सृष्टि का उद्भव।

जय माँ करणी तेरी लीला-
गूँज रही जन-जन में,
तेरी कृपा रहे माँ मेरे-
जीवन के हर क्षण में।

जय माँ करणी विश्व-पोषणी-
तेरी महिमा न्यारी,
कृपा करो माँ गहन तिमिर में-
आए नव उजियारी।।

उन्नीसवाँ पुष्प

व्यक्त और अव्यक्त सृष्टि है-
परम शक्ति से स्पदित,
दृश्य और अदृश्य उसी का-
परम तत्त्व प्रतिभासित।

जो पदार्थ या बिम्ब दीखता-
सब में उसकी छवि है,
नभ से भू तक, शक्ति-रूप वह-
कुलिष-फूल-घन-पवि है।

पत्थर में वह अति कठोर है-
फूलों में मृदु कोमल,
रूप उसी का बिम्बित रहता-
निखिल सृष्टि में प्रतिपल।

उससे भिन्न जगत में कुछ भी-
नहीं दिखाई पड़ता,
शब्द-शब्द में वही, दूसरा-
नहीं सुनाई पड़ता।

वही शक्ति जब भू पर आती-
रूप नया जग जाता,
उसकी सब सीमा में आते-
शेष न कुछ रह पाता।

वही शक्ति है परम अलौकिक-
सब कुछ वहाँ सुलभ है,
वस्तु सृष्टि की कोई भी तो-
उसको कब दुर्लभ है?

हस्तामलक उसे है सब कुछ-
कुछ भी नहीं असभव,
इसे मिटाकर कर सकती वह-
नयी सृष्टि का उद्‌भव।

जीवन और मरण का उसको-
बन्ध नहीं रह जाता,
मरे हुए जीवों में भी वह-
जीवन नया जगाता।

✦ ✦ ✦

करणी माँ थी परम शक्ति की-
एक शिखा थीं ज्योतित,
परम रूप परमेश्वर का जो-
अपने हुई प्रकाशित।

नर-तन में रहकर भी दैवी-
शक्ति प्रकट हो आई,
परम शक्ति की ध्वजा अलौकिक-
अम्बर तक फहराई।

जब भी पड़ी जरूरत करणी-
माँ ने हाथ बढ़ाया,
प्राण-हीन शव में भी उसने-
जीवन नया जगाया।

एक दिवस मेहाजी वन से-
अपने घर थे आते,
सध्या के झुटपुट में जैसे-
तैसे पाँव बढाते।

सहसा कोई विषधर ने था-
उनको काट गिराया,
उनके शीतल तन पर उसके-
विष ने असर दिखाया।

हुए तुरत निर्जीव तनिक भी-
डोल नहीं वे पाए,
किसी तरह कुछ लोग उठाकर-
उनको घर पर लाए।

करणी जी ने देख पिता को-
अपना ध्यान लगाया,
सहसा मेहा जी के तन में-
नव जीवन लहराया।

निर्विष होकर मेहा जी अब-
पूरे स्वस्थ हुए थे,
उन्हें देख कर दैव-शक्ति पर-
सब आस्वस्थ हुए थे।

✦ ✦ ✦

करणी माँ का सुयश धरापर-
दिशा-दिशा तक फैला,
जागा सुख औ' भागा मन-से-
दुख का सर्प विषैला।

जो भी सुनता, दौड़ा आता-
आकर शीश नवाता,
माँ का आशीर्वाद प्राप्त कर-
सब कुछ था पा जाता।

दूर-दूर तक पुण्य-भाव का-
नव आलोक जगा था
प्रेम-स्नेह-सौहार्द विभा से-
सब का हृदय पगा था।

करणी माँ ही केन्द्र-बिन्दु थी-
जहाँ सभी जन आते,
यही ठौर था जहाँ सभी जन-
आकर कष्ट मिटाते।

अपने और पराये का कुछ-
भेद नहीं था मन में,
जो भी आते हृदय रमाते-
निर्मल शान्ति-सदन में।

एक अलौकिक आभा जैसी-
वहाँ छिटकती रहती,
लगता, वहाँ शान्ति की पावन-
निर्मल गगा बहती।

जिसको जो भी कष्ट सताता-
मइया से आ कहता,
करणी माँ के पास किसी को-
दु ख न कोई रहता।

✦ ✦ ✦

वेद-पुराण-आर्ष ग्रथों की-
वाणी यही बताती,
मानव-योनि धरा को सबदिन-
सुन्दर सदा बनाती।

अन्य योनि तो भोग-योनि है-
भोग भोगना पड़ता,
वहाँ जीव के तन में, मन में-
रहती केवल जड़ता।

हर जीवों के साथ बँधा है-
कर्म शुभाशुभ जग में,
अपने कर्मों का फल मिलता-
जीवन के इस मग में।

महा ज्योति से सिक्त, भुवन पर-
अपना रूप दिखाया,
भटक रहे प्राणी को माँ ने-
सच्चा मार्ग बताया।

✦ ✦ ✦

जय माँ करणी! महा ज्योति व
आभा की जय गाएँ,
उस अनन्त की सत्ता में ही-
अपना मन बहलाएँ।

देशनोक है कीर्ति उन्हीं की-
विमल केतु फहराए,
पुण्य भाव से भर कर उसको-
रखके सदा सजाए।

जय-जय माते करणी। हम हैं-
भूतल के लघु प्राणी,
अपना मुझे बनाकर, दो कुछ-
ज्ञान किरण कल्याणी।

बीसवाँ पुष्प

जयति भवानी करणी तू ही–
जग में पुण्य प्रकाशित,
तेरी अगरु-गध-महिमा से–
अग-जग सदा सुवासित।

तू ने आकर इस धरती पर-
नया लोक फैलाया,
तेरे कारण मरु-प्रदेश भी-
पुण्यवान कहलाया।

जहाँ-जहाँ तू गयी, सत्य के-
केतु वहाँ फहराए,
तेरे यश के कीर्त्तन सब ने-
मुक्त कठ से गाए।

महाज्योति की किरण नवीना-
बनकर तू थी आई,
दैव-शक्ति का परम सँदेशा-
भूतल पर थी लाई।

तेरी कार्य-प्रणाली में ही-
लीला रही समाहित,
जो भी तू करती थी जग में-
होता था लोकादृत।

अपने जन को तूने माता-
विपुल प्रतिष्ठा दी है,
अपने भक्त जनों की तू ने-
गौरव-वृद्धि की है।

✦ ✦ ✦

दशरथ मेघवाल जैसा भी-
आज अमर है भू पर,
माँ की ऐसी कृपा हुई वह-
बन भुवन में भास्वर।

करणी माँ के पशुधन का था-
एक [illegible] चरवाहा,
जंगल में ही गाय चराता-
जा-जा कर गोपाल।

एक दिवस कालू-सूजा ने-
उसको घेर लिया था,
दोनों डाकू ने मिल उसका-
काम तमाम किया था।

गायों को ले भागे डाकू-
लोग-बाग चिल्लाए
सुनत आई करणी माता-
[illegible] सभी पकड़ाए।

करणी माँ ने डाकू दोनों-
क्षण में मार दिया
और पुनः उस [illegible] को भी-
माँ ने [illegible]।

दशरथ की नव मूर्त्ति वहाँ के-
मदिर में लगवायी,
मुख्य द्वार के दाएँ रखकर -
गरिमा सहज दिलायी।

✦ ✦ ✦

इसी तरह बीठू जी का जो-
ऊँट चला था आगे,
उसका टूटा पाँव देख कर-
सब थे उसको त्यागे।

जगल में तब बीठू ने था-
'दादी माँ' - चिल्लाया,
सहसा करणी माँ ने आकर-
उसको ठीक बनाया।

उसी ऊँट पर चलकर बीठू-
देशनोक तक आए,
जगल की उस घनी राह में-
नहीं तनिक घबराए।

मजिल पर आ ऊँट गिरा औ'-
तत्क्षण स्वर्ग सिधारा,
करणी माँ ने दिया उसे भी-
अपना पुण्य सहारा।

ऊँट-पाँव से जो निकला था–
लोहा काला-काला,
उसका था त्रिशूल बनाया–
ऊपर रहने वाला।

मंदिर के गुंबद पर अब भी–
लगता बड़ा सुहाना,
लोग वहाँ के हैं दुहराते–
यह इतिहास पुराना।

सभी क्षेत्र में माँ करणी की–
अद्‌भुत छाप पड़ी है,
परम अलौकिक महाशक्ति की–
लीला गहन बड़ी है।

✦ ✦ ✦

इस धरती पर जो आते हैं–
सीमा में बँध जाते,
इस दुनिया में आकर सब जन–
जग का धर्म निभाते।

कोई हो अवतारी या हो–
महाप्राण का पोषक,
सीमा-हीन अनन्त शक्ति का–
चाहे हो उद्‌घोषक।

पच-तत्त्व से निर्मित जिस क्षण-
उसका तन हो जाता,
उसी समय से उसको सीमा-
वन्धन छोड़ न पाता।

दृश्य जगत है यही कि इसका-
निश्चित अन्त वदा है,
इस दुनिया का तत्त्व एक भी-
रहता नहीं सदा है।

मिटने वाली इस दुनिया में-
सब कुछ ही मिट जाता,
अपना और पराया कुछ भी-
सब दिन कव रह पाता?

धरती का है धर्म यही, जो-
आते, निश्चय जाते,
विश्व-मच पर जीव अहर्निश-
आते, खेल दिखाते।

✦ ✦ ✦

सब की है कुछ अवधि सुनिश्चित-
जिसमें जीवन रहता,
निश्चित काल-समय-सीमा में-
जन-जन सुख-दुख सहता।

जिसको जितना जो करना है-
सब कुछ है निर्धारित,
पूरा करके काम सभी को-
चल देना है निश्चित।

पच तत्त्व का तन माटी का-
माटी में है मिलना,
जग-उपवन में क्षण भर को ही-
फूलों का है खिलना।

प्रकृति-पुरूष का महाजाल है-
इस धरती पर छाया,
न्याय-नीति की इसी शक्ति की-
दिखती भू पर काया।

महत्त ज्योति की आत्म शलाका-
स्वय प्रकाशित होती,
मोह निशा में सुप्त मनुज को-
जगा सुवासित होती।

करणी माँ भी महत्-तत्त्व की-
ज्योति वनी थी आई,
धरती पर आकर उसने भी-
भू की रीति निभाई।

ज्योति-ज्योति में हुई समाहित-
पूर्ण काम सब कर के
भूतल के घन-अन्धकार में-
ज्योति अलौकिक भर के।

✦ ✦ ✦

अहि-राज से डसा स्वयं ने-
राव जैतसी अपने।
छिन्न हुए थे उनके सारे-
जीवन के सब सपने।

करणी माँ ने सुना तो आई-
उन्हें देखने सत्वर,
ठीक किया सब रोग तुरत ही-
उनके व्रण को छू कर।

रोग-मुक्त हो लगे जैतसी-
माँ का कीर्तन गाने,
उनके यश की गाथा को वे-
सबको लगे सुनाने।

यहीं एक जन्मान्ध व्यक्ति को-
माँ ने नेत्र दिए थे,
अपनी मूर्ति बनाने के फिर-
उससे वचन लिए थे।

चली वहाँ से करणी माता-
अधिक नहीं रूक पाई,
साथ सभी का छोड़ वहाँ से-
तुरत घिनेरी आई।

हुआ महानिर्वाण वहीं पर-
देवी करणी माँ का,
महाकाश में था प्रकाश अब-
धरती की करूणा का।

ज्योति-ज्योति में मिली अखण्डित-
ज्योति-पुज लहराया,
देव-लोक ने उनके स्वागत-
में नव गीत सुनाया।

जय माँ करणी तेरी गाथा-
सब दिन अमर रहेगी,
जब तक सूरज-चाँद रहेंगे-
धरती कथा कहेगी।

✦ ✦ ✦

जय-जय माते करणी! तेरी-
जय-जय हम सब गाएँ।
तेरी करूणा का कण पाकर-
जीवन सफल बनाएँ।।

इक्कीसवाँ पुष्प

जय-जय करणी माता कैसे-
तेरा यश हम गाएँ?
ज्ञान नहीं है, शब्द नहीं है-
कैसे भजन सुनाएँ?

हम मानव धरती के प्राणी–
सभी तरह से निर्बल,
जीवन-यात्रा के इस पथ पर–
पास न कोई सम्बल।

तू ही माँ करुणा-कर करणी–
राह सुगम अब कर दे,
मन की दुर्गम तिमिर-गुफा में–
ज्योति अकम्पित भर दे।

माना परम ज्योति में लौकिक–
आभा लीन हुई है,
पच तत्त्व में माते, भौतिक–
देह विलीन हुई है।

लेकिन यह परिवर्तन का ही–
एक रूप है केवल,
इससे कब होती है माते–
तेरी करुणा निष्फल?

तेरी करुणा अब भी सबको–
सदा प्राप्त हो जाती,
जिसने जब भी तुझे पुकारा–
निश्चय ही तू आती।

इक्कीसवाँ पुष्प

जय-जय करणी माता कैसे-
तेरा यश हम गाएँ?
ज्ञान नहीं है, शब्द नहीं है-
कैसे भजन सुनाएँ?

हम मानव धरती के प्राणी-
सभी तरह से निर्बल,
जीवन-यात्रा के इस पथ पर-
पास न कोई सम्बल।

तू ही माँ करूणा-कर करणी-
राह सुगम अब कर दे,
मन की दुर्गम तिमिर-गुफा में-
ज्योति अकम्पित भर दे।

माना परम ज्योति में लौकिक-
आभा लीन हुई है,
पच तत्त्व में माते भौतिक-
देह विलीन हुई है।

लेकिन यह परिवर्तन का ही-
एक रूप है केवल,
इससे कब होती है माते-
तेरी करूणा निष्फल?

तेरी करूणा अब भी सबको-
सदा प्राप्त हो जाती,
जिसने जब भी तुझे पुकारा-
निश्चय ही तू आती।

राव जैतसी को तू ने ही-
शक्ति अपरिमित दी थी,
बाबर के सुत कामरान पर-
विजय सुनिश्चित की थी।

तू ने ही तो हाथ उठा कर-
उन्हें कहा था- जाओ,
दुश्मन आगे नहीं बढेगा-
उसको तुरत हटाओ।

निराकार से तेरा इंगित-
पाकर राव बढे थे,
मुगलों के उस विपुल सैन्य पर-
रातों-रात चढे थे।

तेरा ही माँ वह प्रताप था-
जिसने जीत दिलाई,
तू ने माते हर प्राणी की-
नैया पार लगाई।

✦ ✦ ✦

देशनोक में तू ने छोटा-
मंदिर था बनवाया,
उसमें अपनी आराध्या का-
तू ने था गुण गाया।

आवड़जी आराध्या तेरी–
करुणा की थी देवी,
तू तो थी उनकी ही पूजक–
उनके पद की सेवी।

वह छोटा–सा मन्दिर अब तो–
भव्य विशाल बना है,
वहाँ चँदोवा तेरी ममता–
का ही आज तना है।

महाराज सूरज सिह ने था–
पक्का इसे बनाया,
चाँदी का दे दिव्य नगारा–
मन्दिर में सजवाया।

महाराज गगासिह जी में–
तेरी भक्ति भरी थी,
उनके हर कृत्यों में माते–
तेरी शक्ति भरी थी।

मरु–प्रदेश में–गग नहर ला–
भागीरथ कहलाये,
इस मन्दिर को भव्य उन्होंने–
सचमुच खूब बनाए।

मन्दिर के अन्दर सोने का-
सुन्दर द्वार लगा है,
राज घराने का है उसमें-
श्रद्धा-भाव जगा है।

उसके बाहर चाँदी का जो-
दिखता है दरवाजा,
लाभचद श्रीमत सुराणा-
के पूर्वज ने साजा।

इसी तरह कितने भक्तों ने-
मदिर को सजवाया,
पुण्य-कार्य में हाथ बँटा इस-
भू को तीर्थ बनाया।

देश-विदेश सभी जगहों से-
लोग यहाँ पर आते,
आकर सब माँ, तेरे पद में-
सादर शीश झुकाते।।

इस मदिर के ऊपर अब भी-
वह त्रिशूल है दिपता,
ऊँटों के प्रति ममता का ही-
फूल सदृश्य वह दिखता।

बाहर चरवाहा दशरथ की-
मूर्त्ति सजी है न्यारी,
कावे हैं सब ओर कि जिन से-
छटा छिटकती प्यारी।

इन कावों को आदर देते-
लोग प्यार से भर कर,
मन्दिर में सब ओर घूमते-
रहते हैं निशि-वासर।

दृश्य यहाँ का सदा अलौकिक-
ही सब को है लगता,
यहाँ पहुँचने पर अनजाने-
सबका ही मन रमता।

✦ ✦ ✦

महाशक्ति के रूप अनेकों-
भू पर सदा निखरते,
जन-हित-कारक-भाव हृदय से-
रहते वहाँ बिखरते।

भौतिक तन का कार्य धरा पर-
रहता है परिलक्षित,
किन्तु बाद के कर्म यहाँ पर-
होते सदा अलक्षित।

जीवन में सब देख रहे थे-
नेत्र मिले थे जिसको,
पुत्र मिला सूवा ब्राह्मण को-
थी संतान न उसको।

जगडू शाह को विवश देखकर-
माँ ने रक्षा की थी,
सुख-सौभाग्य बढ़ेगा- ऐसी-
आशिष उनको दी थी।

फिर व्यापार निरन्तर उनका-
बढ़ता ही नित आया,
करणा-खाती का भी माँ ने-
ही था प्राण बचाया।

✦ ✦ ✦

जीवन में ये सब घटनाएँ-
होती सब दिन रहतीं,
दिशा-दिशा तक उनके यश की-
गाथाएँ थीं कहतीं।

लेकिन अब तो निराकार थी-
देख न कोई पाता,
फिर भी प्रतिपल उनकी करुणा-
का अनुभव कर जाता।

महाशक्ति जो व्याप्त यहाँ है-
वह है सदा अखण्डित,
भेद-भाव का वहाँ न कोई-
वन्धन रहा समाहित।

तत्त्व हुआ साकार वही तो-
निराकार भी होता,
पट-परिवर्त्तन में फिर कैसे-
परम पराक्रम खोता।

निराकार-साकार बीच है-
भेद न कोई तात्विक,
उसको है प्रत्यक्ष सभी कुछ-
मन है जिसका सात्विक।

मन के निर्मल भावों पर ही-
सब अध्यात्म टिका है,
भाव न हो पावन तो सब कुछ-
कौड़ी-मूल्य बिका है।

मन के भावों से ही पत्थर-
भी भगवान वना है,
जीवन-सागर की लहरों पर-
वह जलयान वना है।

भाव न मन के निर्मल हें तो-
ईश्वर भी पत्थर है,
दूषित मन होने से सारा-
जीवन दुख का घर हे।

इसीलिए करणी माता ने-
सबको शिक्षा दी है,
सब के उन्नति औ' विकास की-
शुभ्र कामना की है।

डेढ़ सहस्र जीवन में माँ ने-
अद्‌भुत काम किए थे,
बिखरे राज्यों को भी उसने-
तत्क्षण जोड़ दिए थे।

एक सूत्र में उन्हें बाँधकर-
सच्चा मार्ग दिखाया,
उनके जड़-जीवन में उसने-
नूतन शख बजाया।

कहते सब मदिर के काबे -
चारण के हैं वशज,
मुक्ति सभी पाते हैं काबे-
होकर के भी अत्यज।

यह सब माता करणी के ही-
परम पुण्य का फल है,
जिसने भक्ति दिखाई, उसका-
जीवन सदा सफल है।

भाव-भरित जीवन का ही है-
यह भी निर्मल दर्शन,
यही शक्ति है भाव-भक्ति की-
होता जिसका पूजन।

निर्मल-भाव-शून्य अन्तर में-
किसे मिलेगा आश्रय ?
हिंसा-द्वेष-घृणा का होगा-
उसमें केवल अभिनय।

माँ करणी के सब कृत्यों में-
सात्विक भाव भरे थे,
जिसके कारण मरू प्रदेश में-
बल-पौरूष उभरे थे।

मंदिर के ओरण में माँ ने-
जो थे पेड़ लगाए,
सबने कटने से उन सबको-
रक्खा सदा बचाए।

काट न सकता कोई उनको-
यह है भावित माया,
सब पेड़ों के साथ मनुज ने-
प्रेम-भाव अपनाया।

विमल भाव का यही रूप है-
नर जिसको अपनाता,
इसी भाव के कारण भू-तल-
ही कुटुम्ब बन जाता।

करणी माँ ने जग-जीवन में-
नूतन ज्योति जगाई,
मानवता के सद्-विकास की-
अनुपम राह दिखाई।

✦ ✦ ✦

करणी माँ के कृत्यों में है-
तीन पीठ के गायन,
प्रथम सुवाप जहाँ पर माँ ने-
जन्म लिया था पावन।

और दूसरा देशनोक है-
कार्य-क्षेत्र ही माँ का
फहर रही है उनके यश की-
अब तक यहाँ पताका।

और तीसरा क्षेत्र घिनेरी-
तप पूत अति सुन्दर,
महाप्रयाण किया था माँ ने-
अपने जहाँ पहुँच कर।

प्रतिदिन लोग यहाँ आ-आकर-
अपना शीश झुकाते,
भक्ति-भाव से श्रद्धापूर्वक-
माँ का भजन सुनाते।

✦ ✦ ✦

जय माँ करणी शक्ति-भक्ति की-
तू है विमल प्रतीका,
पूर्ण करेगी तू ही केवल-
परम मनोरथ जी का।

हम हैं मानव अन्धकार में-
ज्योति किरण दे माता,
गहन तिमिर में भटक रहे हैं-
चरण-शरण दे माता।

कटें बन्ध जड़ता के सारे-
जीवन-तरू लहराए,
शुद्ध विमल भावों से प्रतिक्षण-
हृदय-कली मुस्काए।

जय माँ करणी! तेरे पद पर-
आत्म-समर्पण कर दूँ,
रहे पास कुछ शेष नहीं माँ-
सब कुछ अर्पण कर दूँ।

शक्ति-भक्ति दे, जगे हृदय में-
तेरा सात्विक विग्रह,
सदा तुम्हारे मातृ-रूप पर-
शीश नवाऊँ रह-रह।

तेरे यश का गीत सुनाऊँ-
हँसूँ और इठलाऊँ
हर क्षण अपने मन-मानस में-
माता तुझे बिठाऊँ।

जय-जय करणी माते, तेरी-
कीर्ति-ध्वजा फहराए,
मन का चचल विहग शान्ति से-
तेरा यश दुहराए।

जय-जय माते करणी जय-जय-
अभय धरा को कर दो,
संशय-भ्रम के अन्धियारे में-
निश्चय को स्वर भर दो।

जय-माँ करणी! व्यथित भुवन पर
स्नेह-प्यार बरसाओ
हम हैं बिछुड़े बालक तेरे-
अपना हमें बनाओ।।

समाप्त